पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2018 का सिविल विविध क्षेत्राधिकार संख्या 1868

==========

सीता राम साह, पिता स्वर्गीय राम किशन साह, निवासी- मोहल्ला-मोकीमपुर, बेगुसराय,टोला-मुंगेरीगंज, वार्ड संख्या 33, थाना-सदर बेगुसराय, जिला-बेगुसराय ।

... ... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

प्रेम पासवान, पिता- स्वर्गीय सुखो पासवान, निवासी- मोहल्ला-गच्ची टोला, बेगुसराय, थाना-सदर, बेगुसराय, जिला-बेगुसराय।

... ... उत्तरदाता/ओं

==========

उपस्थितिः

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से : श्री चन्द मौली चौरसिया, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी/ओं की ओर से : श्री.

==========

सिविल प्रक्रिया संहिता--- आदेश 6, नियम 17; आदेश 47 नियम 1; धारा 114, 152---अंतिम डिक्री पारित होने के बाद दलीलों में संशोधन---याचिकाकर्ता द्वारा संशोधन आवेदन की अस्वीकृति की समीक्षा करने के लिए दायर समीक्षा आवेदन को खारिज करने के आदेश को अलग करने के लिए याचिका जिसके द्वारा याचिकाकर्ता सूट संपत्ति में उल्लिखित सीमाओं में टाइपोग्राफिकल गलती को ठीक करना चाहता था।

निष्कर्ष: आदेश 6, नियम 17 में "कार्यवाही के किसी भी चरण में" शब्द निष्पादन चरण में लंबित कार्यवाहियों को भी शामिल करने के लिए पर्याप्त है। मुकदमे के भूखंड की सीमाओं का वर्णन एक आकस्मिक चूक और मुद्रण संबंधी त्रुटि है, जो निष्पादन की प्रक्रिया तक पता नहीं चली और विद्वान ट्रायल कोर्ट को वादी/याचिकाकर्ता की संशोधन याचिका पर आदेश पारित करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए था। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि एक सफल वादी को डिक्री में कुछ त्रुटि के कारण डिक्री के फल से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। विद्वान ट्रायल कोर्ट ने इस बारे में कोई तर्क नहीं दिया कि सीमा में परिवर्तन से मुकदमे की भूमि की प्रकृति कैसे बदल जाएगी और किस तरह से यह दूसरे पक्ष के लिए पूर्वाग्रह पैदा करेगा। न्याय के हित में

संशोधन के औपचारिक प्रकार, जिसके लिए किसी विस्तृत जांच की आवश्यकता नहीं हो सकती है, को अनुमति दी जानी चाहिए। विवादित आदेश अलग रखे गए। याचिका स्वीकार की गई। (पैरा 6, 9, 11, 12, 15)

*ए आई आर 1976 डेल 56, (2007) 13 एससीसी 421, (2009) 11 एससीसी 308 .....**पर भरोसा किया गया।***

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

समक्षः माननीय न्यायमूर्ति श्री अरुण कुमार झा

मौखिक निर्णय

दिनांक:18-03-2025

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. नोटिस की वैध तामील के बावजूद, उतर वादी की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ ।

3. याचिकाकर्ता विद्वान मुंसिफ, बेगूसराय द्वारा विविध वाद संख्या 02/2018 में पारित दिनांक 05.09.2018 के आदेश से व्यथित है, जिसके तहत विद्वान मुंसिफ ने वादी/याचिकाकर्ता की ओर से धारा 114 के साथ नागरिक प्रक्रिया संहिता (जिसे आगे 'संहिता' कहा जाएगा) के आदेश 47 नियम 1 के तहत दायर उपरोक्त विविध मामले को खारिज कर दिया है, ताकि शीर्षक बेदखली वाद संख्या 07/2009 में विद्वान मुंसिफ, बेगूसराय द्वारा दिनांक 28.11.2017 को पारित आदेश की समीक्षा की जा सके, जिसके तहत वादी/याचिकाकर्ता की ओर से संहिता की धारा 152 के साथ आदेश 6 नियम 17 के तहत दायर संशोधन याचिका दिनांक 02.12.2016 को खारिज कर दिया गया है। याचिकाकर्ता दिनांक 28.11.2017 के उपरोक्त आदेश से भी व्यथित है।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वादी/याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी/प्रतिवादी के विरुद्ध विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष दिनांक 27.06.2009 को शीर्षक बेदखली वाद संख्या 07/2009 दायर किया था, जिसमें वाद की अनुसूची 1 में वर्णित वाद भूमि के संबंध में बेदखली के आदेश के साथ-साथ अन्य राहतें भी मांगी गई थीं। उक्त शीर्षक बेदखली वाद में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा प्रतिवादी/प्रतिवादी को समन जारी किया गया था, लेकिन वह समन प्राप्त होने के बाद भी उपस्थित नहीं हुआ। तत्पश्चात, प्रतिवादी/प्रतिवादी को पंजीकृत नोटिस भी जारी

किया गया था और यहां तक कि वाद में प्रतिवादी/प्रतिवादी की उपस्थिति के लिए समाचार पत्र के माध्यम से प्रकाशन के माध्यम से प्रतिस्थापित सेवा भी की गई थी, लेकिन वह उपस्थित नहीं हुआ, इस प्रकार, उक्त बेदखली वाद को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा एकपक्षीय सुनवाई के लिए नियत किया गया था। तत्पश्चात, विद्वान मुंसिफ ने दिनांक 02.02.2011 के निर्णय तथा दिनांक 18.02.2011 की डिक्री द्वारा प्रतिवादी/प्रतिवादी के विरुद्ध वादी/याचिकाकर्ता के पक्ष में वाद का आदेश दिया, जिसमें प्रतिवादी/प्रतिवादी को निर्देश दिया गया कि वह वाद परिसर को साठ दिन के भीतर खाली कर दे तथा वाद परिसर का कब्जा वादी/याचिकाकर्ता को सौंप दे तथा वाद की अनुसूची-II में उल्लिखित वाद परिसर के किराए के बकाया के संबंध में वादी/याचिकाकर्ता द्वारा मांगी गई राहत को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया।

विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि जब प्रतिवादी/प्रतिवादी/निर्णय ऋणी ने दिनांक 02.02.2011 के निर्णय और दिनांक 18.02.2011 की डिक्री में पारित विद्वान ट्रायल कोर्ट के निर्देश का पालन नहीं किया, तो वादी/डिक्रीधारक/याचिकाकर्ता ने बेदखली वाद संख्या 07/2009 में पारित दिनांक 18.02.2011 की डिक्री के निष्पादन के लिए 25.06.2011 को विद्वान ट्रायल कोर्ट के समक्ष शीर्षक निष्पादन वाद संख्या 08/2011 दायर किया। इसके बाद, विद्वान निष्पादन न्यायालय ने निष्पादन वाद को आगे बढ़ाया और समन, नोटिस जारी करने और समाचार पत्र के माध्यम से प्रकाशन के माध्यम से नोटिस की प्रतिस्थापित सेवा के बाद भी, प्रतिवादी/निर्णय ऋणी/प्रतिवादी निष्पादन कार्यवाही में उपस्थित नहीं हुआ। तदनुसार, निष्पादन मामला दिनांक 03.06.2013 के आदेश द्वारा एकपक्षीय सुनवाई के लिए नियत किया गया था। इसके बाद, 22.06.2013 को, निर्णय ऋणी/प्रतिवादी निष्पादन मामला संख्या 08/2011 में उपस्थित हुए और निष्पादन कार्यवाही पर आपत्ति करने के लिए संहिता की धारा 151 के साथ आदेश 21 नियम 106 के तहत एक याचिका और संहिता की धारा 151 के साथ आदेश 21 नियम 26 और 29 के तहत एक और याचिका दायर की। पक्षों की सुनवाई के बाद, उपरोक्त दोनों याचिकाओं को विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा दिनांक 27.11.2015 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया। इसके बाद, विद्वान निष्पादन न्यायालय ने निष्पादन मामले में डिक्री धारक/याचिकाकर्ता द्वारा लागत आदि जमा करने के बाद कब्जे के वितरण की रिट जारी की। इसके बाद, अधिकृत व्यक्ति/नाजिर दिनांक 23.10.2016 को कब्जा सौंपने के लिए वाद परिसर में गया, लेकिन वाद परिसर की सीमा का उल्लेख करने में त्रुटि के कारण कब्जा नहीं सौंपा जा

सका और नाजिर द्वारा कब्जा सौंपने की रिट दिनांक 10.01.2017 को विद्वान निष्पादन न्यायालय को वापस कर दी गई।

विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि 23.10.2016 को जब वादी/डिक्री धारक/याचिकाकर्ता को वादपत्र में मुद्रण संबंधी त्रुटियों तथा विद्वान विचारण न्यायालय के निर्णय एवं डिक्री में परिणामी त्रुटि के बारे में पता चला, तो उन्होंने उक्त मुद्रण त्रुटि के संबंध में वादपत्र में संशोधन हेतु आदेश VI नियम 17 आर/डब्ल्यू धारा 152 के अंतर्गत शीर्षक बेदखली वाद संख्या 07/2009 में विद्वान मुंसिफ की अदालत में दिनांक 02.12.2016 को याचिका दायर की। उक्त संशोधन याचिका पर याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के पश्चात विद्वान विचारण न्यायालय ने इसे दिनांक 28.11.2017 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया तथा इसे पोषणीय नहीं पाया। इसके बाद, वादी/याचिकाकर्ता ने धारा 114 के तहत आदेश 47 नियम 1 के तहत विद्वान ट्रायल कोर्ट के समक्ष दिनांक 28.11.2017 के आदेश की समीक्षा के लिए 26.02.2018 को एक समीक्षा आवेदन दायर किया। उक्त समीक्षा आवेदन को विविध मामला संख्या 02/2018 के रूप में पंजीकृत किया गया था, जिसे विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दिनांक 05.09.2018 के आदेश के तहत खारिज कर दिया था। दिनांक 28.11.2017 के आदेश और दिनांक 05.09.2018 के आदेश को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जा रही है।

विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि दिनांक 05.09.2018 का आरोपित आदेश न तो तथ्यों के आधार पर और न ही विधि के आधार पर संधारणीय है, क्योंकि विद्वान मुंसिफ आरोपित आदेश पारित करते समय इस बात पर विचार करने में विफल रहे कि मुद्रण संबंधी गलती या त्रुटि के कारण वाद भूमि की पूर्वी सीमा में 'सड़क' शब्द के स्थान पर '*निज*' शब्द टाइप हो गया है। इसी प्रकार, वाद भूमि की पश्चिमी सीमा में 'वादी के निज घर' शब्द के स्थान पर वाद भूमि की पश्चिमी सीमा में 'सड़क' शब्द गलत टाइप हो गया है, जो सही है और वाद में और फलस्वरूप डिक्री में उक्त टाइपिंग संबंधी गलतियों या त्रुटियों को वादी/याचिकाकर्ता द्वारा असावधानी के कारण पहले नहीं पकड़ा जा सका और यह बात कब्जे की डिलीवरी के समय याचिकाकर्ता के ज्ञान में आई और इस त्रुटि के कारण, कब्जे की डिलीवरी नहीं हो सकी।

विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करता है कि प्रस्तावित संशोधन मुकदमे की प्रकृति को नहीं बदलेगा और न ही यह प्रत्युतरवादी/प्रत्युतरवादी के लिए कोई पूर्वाग्रह या अन्याय का कारण बनेगा।विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि विद्वान मुन्सिफ ने स्वत्व बेदखली मुकदमे में से 7/2009 पारित अपने आदेश दिनांक

28.11.2017 में गलत और आधारहीन निष्कर्ष दिया है कि सीमा में परिवर्तन सूट भूमि की प्रकृति को बदल देगा जो प्रथम दृष्टया एक भ्रामक निष्कर्ष प्रतीत होता है क्योंकि विद्वान मुन्सिफ ने अपने आदेश दिनांक आईडी2 में एक भी शब्द का उल्लेख नहीं किया था कि सूट भूमि की प्रकृति को कैसे बदला जाएगा और यह किस तरह से दूसरे पक्ष के लिए पूर्वाग्रह पैदा करेगा।

विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करता है कि संशोधन याचिका में उल्लिखित नजीर की रिपोर्ट के अनुसार, दो बिंदु प्रत्यक्ष और स्पष्ट हैं, सबसे पहले सूट प्लॉट वही है और इसे बदला या प्रतिस्थापित नहीं किया जा रहा है क्योंकि प्रत्युतरवादी/प्रत्यर्थी को वाद भूमि पर कब्जे में पाया गया है और दूसरा, इसकी सीमा में कुछ त्रुटि है जिसके कारण कब्जे का ाइरस प्रभावित नहीं हो सका है।विद्वत अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करता है कि विद्वत विचारण न्यायालय ने हालांकि नोट किया कि वाद भूमि के लिए बिक्री विलेख में सीमा वही है जिसे वाद में संशोधन के माध्यम से शामिल करने की मांग की जा रही है, फिर भी कुछ गलत धारणा के तहत उसने संशोधन याचिका की अनुमति नहीं दी।विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करता है कि यदि वाद में बिक्री विलेख में उल्लिखित सीमा से अलग सीमा है, तो स्वाभाविक निष्कर्ष यह है कि वाद का मसौदा तैयार करते समय एक अनजाने में त्रुटि हुई थी और त्रुटि केवल एक टंकण संबंधी त्रुटि और एक लिपिकीय गलती है जिसे वादी/याचिकाकर्ता के साथ-साथ उसके अधिवक्ता की अनजाने में रहने की अनुमति दी गई थी और इसे पहली बार में शामिल किया जाना चाहिए।यदि यह तथ्य निष्पादन के चरण में वादी/याचिकाकर्ता के संज्ञान में आया है, तो उसने इस तथ्य को इस न्यायालय के ध्यान में लाया है और संशोधन न तो मुकदमे की प्रकृति या संपत्ति की प्रकृति को बदलने वाला है और न ही वाद में दर्ज साक्ष्य के खिलाफ होगा।सभी मामलों में, विद्वत विचारण न्यायालय के लिए संशोधन को अस्वीकार करने का कोई अवसर नहीं था।

विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करते है कि विद्वत मुन्सिफ संहिता की धारा 152 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 और आदेश 47 नियम 1 के साथ पठित धारा 114 के तहत कानून द्वारा निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहे है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि कहना का संदर्भ सूट भूमि की सीमा के दोनों किनारों में छोटी लिपिकीय गलतियों के कारण प्रभावित नहीं हो सका।विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करता है कि विद्वान मुन्सिफ यह समझने में विफल रहे कि समीक्षा के लिए एक मामला बनाया गया है क्योंकि त्रुटि रिकॉर्ड के चेहरे पर स्पष्ट है।

अपने तर्क के समर्थन में याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने ***अनिरुद्ध सिंह बनाम कृष्ण बिहारी सिंह, 1985 पीएलजेआर 797*** में रिपोर्ट किए गए और ***पूजा मिश्रा बनाम राम दत्त मिश्रा, 1991 (2) पीएलजेआर 604*** में रिपोर्ट किए गए मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों का हवाला दिया है।

इस प्रकार, उपरोक्त निर्णयों के आधार पर, विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि दिनांक 28.11.2017 और 05.09.2018 के दोनों ही विवादित आदेश अन्यथा अवैध, विकृत और अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं और इसलिए इन्हें रद्द किया जाना चाहिए।

5. अभिलेखों का अवलोकन किया।

6. अभिलेख को देखने से लगा है कि याचिकाकर्ता प्रस्तावित संशोधन को शिकायत की अनुसूची-I की वाद संपत्ति में उल्लिखित सीमाओं में गलती को सुधारना चाहता है क्योंकि सडक शब्द के स्थान पर वाद भूखंड की पूर्वी सीमा में 'निज वादी' शब्द टाइप किया गया है। इसी तरह, सूट प्लॉट की पश्चिमी सीमा में 'निज वादी का मकान' शब्द के स्थान पर 'सडक' शब्द को गलत तरीके से टाइप किया गया है। नतीजतन, डिक्री में उपरोक्त गलतियाँ भी हुई हैं।

7. अब, इस न्यायालय के समक्ष सवाल यह है कि क्या अंतिम डिक्री पारित होने के बाद क्या न्यायालय का अधिकार क्षेत्र इस तरह के संशोधन की अनुमति देता है या मुकदमे के निपटारे के साथ समाप्त हो जाता है?

8. संहिता के आदेश VI नियम 17 में अभिवचन में संशोधन का प्रावधान है और यह निम्नानुसार है

> *"17. अभिवचनों का संशोधन-न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी स्तर पर किसी भी पक्ष को अपने अभिवचनों को इस तरह से और ऐसी शर्तों पर बदलने या संशोधित करने की अनुमति दे सकता है जो न्यायसंगत हों, और ऐसे सभी संशोधन किए जाएंगे जो पक्षों के बीच विवाद में वास्तविक प्रश्नों का निर्धारण करने के उद्देश्य से आवश्यक हों.''*

9. उपरोक्त प्रावधान यह स्पष्ट करता है कि "कार्यवाही के किसी भी चरण में" शब्द इतने व्यापक हैं कि इसमें निष्पादन चरण में लंबित कार्यवाही भी शामिल है।

10. ***एक्स-सर्विसमैन एंटरप्राइजेज लिमिटेड बनाम सुमे सिंह ए. आई. आर. 1976 दिल्ली 56 के मामले*** मे माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय ने पैराग्राफ 22, 23 और 24 में निम्नलिखित निर्णय दिया हैः

> *"22... अपने शाब्दिक और वास्तविक अर्थ में "किसी भी स्तर पर" अभिव्यक्ति का अर्थ अवधि की आवृत्ति या समय की लंबाई में बिना किसी सीमा के है।यह एक सीमित अभिव्यक्ति नहीं है।एक कानून का सामान्य उद्देश्य और दायरा जहां इस अभिव्यक्ति का उपयोग किया जाता है, यह दिखा सकता है कि अभिव्यक्ति का सीमित या नियंत्रित अर्थ नहीं है।यह एक ऐसा शब्द है जो अदालत को व्यापक स्वतंत्रता देता है ताकि वह वाद में पक्षों के साथ न्याय कर सके।*
>
> *23. "किसी भी स्तर पर "निष्पादन शामिल होगा। निष्पादन कानूनी कार्यवाही में एक चरण है।यह न्यायिक प्रक्रिया में एक कदम है।यह मुकदमेबाजी के एक चरण को चिह्नित करता है।यह सीढ़ी में एक कदम है। मुकदमेबाजी की यात्रा में विभिन्न चरण होते हैं।निष्पादन उनमें से एक है।यह उस लक्ष्य की ओर कुछ हद तक प्रगति दर्ज करता है जिसे वादी ने अपने लिए निर्धारित किया है।*
>
> *24 ...कब्जे से छूट को शामिल करने के लिए संशोधन को "ऐसी शर्तों पर अनुमति दी जा सकती है जो न्यायसंगत हों"। ये शब्द भी उसी दिशा में इशारा करते हैं। जब विधानमंडल प्रावधान को लागू कर रहा था, तब उसके दिमाग में न्याय का विचार सबसे प्रमुख था। यह जानता था, कोई अनुमान लगा सकता है, कि एक वादी को उन कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है, जिनका सामना वह उस छूट को छोड़ कर कर सकता है जिसका वह हकदार हो सकता है और जिसके लिए धारा कहती है कि उसे मांगना चाहिए। प्रावधान कहता है कि न्यायालय संशोधन को "अनुमति देगा"। ये शब्द जोरदार और अनिवार्य हैं।''*

11. इसके अलावा, मुकदमा डिक्री हो गया। स्वाभाविक रूप से डिक्री में वादी/याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत वाद संपत्ति का विवरण शामिल होगा। चूंकि वाद संपत्ति की सीमा का वाद में गलत उल्लेख किया गया था, इसलिए उसी सीमा का उल्लेख डिक्री में किया गया। अब बिक्री विलेख में संपत्ति का विवरण वही है जो वादी/याचिकाकर्ता वाद में संशोधन के माध्यम से लाना चाहता है और इस कारण से वादी/याचिकाकर्ता पर कोई दुर्भावना नहीं लगाई जा सकती। संशोधन के केवल अवलोकन से ही वादी पूर्वी और पश्चिमी सीमा में 'स्वयं' और 'सड़क' शब्दों के आदान-प्रदान की मांग करता है। इसलिए, मेरा मानना है कि वाद के भूखंड की सीमाओं का वर्णन एक आकस्मिक चूक और मुद्रण संबंधी त्रुटि है, जो निष्पादन की प्रक्रिया तक पता नहीं चल पाई और विद्वान परीक्षण न्यायालय को वादी/याचिकाकर्ता की संशोधन याचिका पर आदेश पारित करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए था।

12. विवादित आदेशों में विद्वान ट्रायल कोर्ट ने यह निष्कर्ष दर्ज किया कि सीमा में परिवर्तन से मुकदमे की भूमि की प्रकृति बदल जाएगी। लेकिन, उन्होंने इस बारे में कोई तर्क नहीं दिया कि मुकदमे की भूमि की प्रकृति कैसे बदलेगी और किस तरह से यह दूसरे पक्ष के लिए पूर्वाग्रह पैदा करेगी। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि आखिरकार एक सफल वादी को डिक्री में कुछ त्रुटि के कारण डिक्री के फल से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। वाद के मुख्य भाग में, मुकदमे की भूमि का पर्याप्त रूप से वर्णन किया गया है। जैसा कि पूर्वोक्त रूप से कहा गया है, केवल मुकदमे की भूमि की सीमाओं का गलत उल्लेख करने के कारण, वही, अपने आप में, वादी/डिक्री-धारक/याचिकाकर्ता को डिक्री के फल से वंचित करने का आधार नहीं हो सकता है।

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ***नियामत अली मोल्ला बनाम सोनारगन हाउसिंग कॉप सोसायटी लिमिटेड, (2007) 13 एस. सी. सी. 421*** मामले के अनुच्छेद 25 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:

> *"**25.** यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें प्रतिवादियों को गुमराह किया गया हो। यह अब अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि पक्षों*

की दलीलों को उनकी संपूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए। उन्हें उदारतापूर्वक समझा जाना चाहिए न कि पांडित्यपूर्ण तरीके से। यह ऐसा मामला भी नहीं है जिसमें संशोधन के कारण एक संपत्ति को दूसरी संपत्ति से प्रतिस्थापित किया जा रहा हो। यदि न्यायालय के पास डिक्री में संशोधन करने की अपेक्षित शक्ति है, तो इसका यह अर्थ नहीं होगा कि उसने डिक्री से आगे बढ़कर कोई डिक्री पारित की है। वाद-पत्र के मुख्य भाग में दिए गए कथनों ने मुकदमे की भूमि का पर्याप्त वर्णन किया है। केवल इसलिए कि संपत्ति की अनुसूची में कुछ रिक्त स्थान छोड़ दिए गए हैं, वही, अपने आप में, प्रतिवादियों को डिक्री के फल से वंचित करने का आधार नहीं हो सकता है। ..... इसलिए, हम इस राय के हैं कि केवल इसलिए कि अनुसूची में जेएल नंबर गायब थे, वही अपने आप में विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने का आधार नहीं होगा।

14. इसके अलावा, के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ***पिठानी सूर्यनारायण और दुसरा बनाम रेपाका वेंकट रमण किशोर और अन्य, (2009) 11 एस. सी. सी. 308*** में, पैराग्राफ नं0 9 और 10 में रिपोर्ट किए गए के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है

9. *मामले में शामिल तथ्यात्मक मैट्रिक्स, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, विवाद में नहीं है। यह भी विवाद में नहीं है कि शिकायत में मुकदमा भूमि को पुनरीक्षण सर्वेक्षण संख्या 165 के रूप में वर्णित किया गया था। गांव नगरपालिका का हिस्सा बन गया, जिसके कारण मुकदमा भूमि को टाउन सर्वे नंबर 463 के रूप में एक नया टाउन सर्वे सौंपा गया था। हालांकि, शिकायत में और परिणामस्वरूप प्रारंभिक डिक्री में और साथ ही अंतिम डिक्री में, टाउन सर्वे नंबर 462 का गलती से उल्लेख किया गया था, जो स्पष्ट रूप से एक टाइपोग्राफिकल गलती थी।*

10. *शिकायत में संशोधन के लिए इस तरह के आवेदन को स्वीकार करने की न्यायालय की शक्ति न तो संदेह में है और न ही*

विवाद में। न्यायालय की ओर से इस तरह की व्यापक शक्ति दो कारकों से सीमित है: (i) आवेदन सद्भावनापूर्ण होना चाहिए; (ii) इससे दूसरे पक्ष के साथ अन्याय नहीं होना चाहिए; और (iii) इससे प्रतिवादियों को पहले से प्राप्त अधिकार प्रभावित नहीं होने चाहिए।"

15. इस विषय पर पहले की गई चर्चा के आलोक में तथा उपरोक्त निर्णयों पर भरोसा करते हुए मैं यह मानता हूँ कि न्याय के हित में औपचारिक प्रकार के संशोधनों को अनुमति दी जानी चाहिए, जिनके लिए किसी विस्तृत जाँच की आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार, मेरा यह विचार है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इंकार करके अधिकार क्षेत्र की त्रुटि की है तथा मेरे विचार से यदि उक्त संशोधन को अनुमति नहीं दी जाती है तो यह न्याय की विफलता भी होगी। अतः दिनांक 05.09.2018 तथा 28.11.2017 के विवादित आदेशों को निरस्त किया जाता है। परिणामस्वरूप दिनांक 02.12.2016 की संशोधन याचिका को अनुमति दी जाती है।

16. उपरोक्त टिप्पणियों और निर्देशों के साथ, तत्काल याचिका स्वीकृत की जाती है।

(अरुण कुमार झा, न्यायमूर्ति)

वी.के पाण्डेय/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।